International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

भक्ति आंदोलन में सामाजिक परिवर्तन: कबीरदास की निर्गुण भक्ति एवं सूरदास की सगुण भक्ति की तुलनात्मक समीक्षा

श्रीमती शैलेश शर्मा[1], डॉ. अरुण कुमार पाण्डेय[2]

[1]शोधार्थी, रवींद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय (आरएनटीयू), रायसेन
[2]मार्गदर्शक, रवींद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय (आरएनटीयू), रायसेन

प्रस्तावना :-

भारतीय साहित्य और सांस्कृतिक इतिहास में भक्ति आंदोलन एक ऐसा महत्त्वपूर्ण आंदोलन है जिसने न केवल धार्मिक क्षेत्र में परिवर्तन लाया, अपितु सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी गहरी छाप छोड़ी। यह आंदोलन लगभग सातवीं से सत्रहवीं शताब्दी तक भारतीय उपमहाद्वीप में फैला रहा और इसने तत्कालीन समाज में व्याप्त असमानताओं, रूढ़िवाद, जाति-व्यवस्था और धार्मिक कट्टरता के विरुद्ध एक शक्तिशाली आवाज़ बुलंद की। भक्ति आंदोलन का मुख्य उद्देश्य था ईश्वर तक पहुँचने का अधिकार केवल किसी विशेष वर्ग या जाति तक सीमित नहीं रहना चाहिए, बल्कि यह अधिकार प्रत्येक मनुष्य को प्राप्त है, चाहे वह किसी भी जाति, वर्ण, लिंग या धर्म का हो। इस आंदोलन ने "भक्ति" को केवल एक धार्मिक भावना से उठाकर एक व्यापक सामाजिक चेतना का रूप दिया, जिसने जन-साधारण को अपनी गुलामी की जंजीरें तोड़ने और स्वतंत्र चिंतन करने की प्रेरणा दी।

भक्ति आंदोलन को मुख्य रूप से दो धाराओं में विभाजित किया जाता है **निर्गुण धारा** और **सगुण धारा**। निर्गुण धारा ईश्वर को निराकार, निर्गुण और सर्वव्यापी मानती है, जबकि सगुण धारा ईश्वर को एक विशिष्ट रूप में जैसे राम या कृष्ण साकार रूप में पूजती है। इन दोनों धाराओं के प्रमुख प्रतिनिधियों में **कबीरदास** और **सूरदास** का नाम सर्वोपरि है। कबीरदास निर्गुण धारा के सबसे प्रभावशाली कवि माने जाते हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से सीधे तौर पर सामाजिक बुराइयों की आलोचना की। दूसरी ओर, **सूरदास** सगुण धारा के प्रमुख कवि हैं, जिन्होंने कृष्ण-भक्ति और रासलीला के माध्यम से भावनात्मक एकात्मकता का संदेश दिया। दोनों कवियों ने अपनी-अपनी विधा और दृष्टिकोण से समाज में परिवर्तन लाने का प्रयास किया, किंतु उनके मार्ग और विधियाँ भिन्न-भिन्न थीं। कबीरदास का जीवन और साहित्य उस समय के भारत की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि को दर्शाता है जब मुस्लिम शासकों का आगमन और हिंदू समाज में व्याप्त जाति-व्यवस्था ने समाज को दो धड़ों में बाँट दिया था। कबीर, जो स्वयं एक जुलाहे के परिवार में जन्मे और हिंदू-मुस्लिम दोनों संस्कृतियों के संपर्क में रहे, ने अपनी रचनाओं में जाति, धर्म और कर्मकांड की कड़ी आलोचना की। उनकी साखियाँ और दोहे न केवल एक साहित्यिक रचना हैं, अपितु एक सामाजिक घोषणापत्र की तरह हैं जो ब्राह्मणवाद, मठवाद और पाखंड के विरुद्ध सीधी चुनौती हैं। कबीर ने "जाति" को मानव-निर्मित बताते हुए कहा कि सभी मनुष्य एक ही मिट्टी से बने हैं और कोई भी किसी से श्रेष्ठ नहीं है। उनकी भाषा सधुक्कड़ी या खड़ी बोली सीधी, सरल और जन-साधारण की भाषा थी, जिसने उनके संदेश को आम लोगों तक पहुँचाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

*विपरीत रूप से, सूरदास का साहित्य वैष्णव परंपरा और कृष्ण-भक्ति के गहरे प्रभाव में लिखा गया। सूरदास ने अपनी रचनाओं में कृष्ण की लीलाओं, रासलीला, और गोपियों के प्रेम का वर्णन किया। किंतु इस भावनात्मक भक्ति के पीछे भी

एक गहरा सामाजिक संदेश निहित है। सूरदास ने गोपियों जो समाज के साधारण ग्रामीण स्त्रियाँ थीं को ईश्वर के प्रेम की उच्चतम अवस्था का प्रतीक बनाया, जिसने स्त्री के स्थान को पुनर्परिभाषित किया। रासलीला में सभी गोपियाँ चाहे वे किसी भी वर्ण या स्थिति की हों कृष्ण के प्रेम में समान रूप से भाग लेती हैं, जो एक प्रकार की सामाजिक समरसता का प्रतीक है। सूरदास की ब्रज भाषा में लिखी पदावली ने भक्ति को एक भावनात्मक अनुभव बनाया, जो जाति-भेद को भुलाकर सभी को एक सूत्र में पिरोने का प्रयास करती है।

इन दोनों कवियों की रचनाओं का सामाजिक प्रभाव तुलनात्मक रूप से अध्ययन करना इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि दोनों ने भिन्न-भिन्न मार्गों से एक ही लक्ष्य की ओर अग्रसर होने का प्रयास किया। कबीर ने सीधे, कठोर और तर्कपूर्ण भाषा में सामाजिक वास्तविकताओं को उजागर किया, जबकि सूरदास ने रूपक, प्रतीक और भावनात्मक अनुभव के माध्यम से सामाजिक एकता का संदेश दिया। कबीर की निर्गुण भक्ति ने धर्म को व्यक्तिगत अनुभव बनाया बिना किसी मध्यस्थ के, बिना किसी कर्मकांड के; जबकि सूरदास की सगुण भक्ति ने ईश्वर को एक सुलभ, प्रेममय और करीबी रूप में प्रस्तुत किया, जिससे भक्त को आत्मसमर्पण का मार्ग मिला।

इस शोध-पत्र का मुख्य उद्देश्य इन दोनों महान कवियों की रचनाओं के सामाजिक प्रभाव की तुलनात्मक समीक्षा करना है। इसमें यह जानने का प्रयास किया जाएगा कि कबीर और सूरदास ने अपनी-अपनी विधा और दृष्टिकोण से समाज में किस प्रकार के परिवर्तन लाने का प्रयास किया, उनके मार्गों में क्या समानताएँ और भिन्नताएँ थीं, और इन रचनाओं का आधुनिक भारतीय समाज में क्या प्रासंगिकता है। इस शोध में प्राथमिक स्रोतों कबीर की साखियाँ, दोहे, रमैनी और सूरदास की पदावली, सूरसागर का विश्लेषण किया जाएगा, साथ ही द्वितीयक साहित्य शोध-पत्र, समीक्षात्मक पुस्तकें और ऐतिहासिक ग्रंथ का भी उपयोग किया जाएगा।

इस प्रकार, यह शोध-पत्र भक्ति आंदोलन के सामाजिक परिवर्तनकारी पक्ष को निर्गुण और सगुण धाराओं के प्रतिनिधि कवियों की दृष्टि से समझने **का एक प्रयास होगा, जो न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, अपितु समकालीन सामाजिक संदर्भ में भी अत्यंत प्रासंगिक है।**

शब्दावली : निर्गुण,सगुण.साखी,दोहा दो पंक्तियों का छंद, पदावली,रासलीला, सधुक्कड़ी,ब्रज भाषा,पीताम्बर,नटवर,ग्वाल-बाल,गोपी,मर्म,मुक्ति,अहिंसा,क्षमा

1. समीक्षा साहित्य :-

1.1 भक्ति आंदोलन पर प्रमुख शोधकार्य

भक्ति आंदोलन पर भारतीय साहित्य और इतिहास में अनेक महत्वपूर्ण शोधकार्य हुए हैं। **हजारी प्रसाद द्विवेदी** ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ *कबीर* (1950) में कबीर के व्यक्तित्व और काव्य का गहन विश्लेषण किया। द्विवेदी ने कबीर को केवल एक धार्मिक संत न मानकर एक क्रांतिकारी सामाजिक सुधारक के रूप में प्रस्तुत किया। उनके अनुसार, कबीर ने "केवल रूढ़िवादी धार्मिक प्रथाओं का ही नहीं, बल्कि पूरे सामाजिक ढांचे का विरोध किया जो जाति और वर्ग के आधार पर विभाजित था।"

रामचंद्र शुक्ल ने अपने *हिंदी साहित्य का इतिहास* (1929) में भक्तिकालीन साहित्य का व्यापक मूल्यांकन किया। शुक्ल ने निर्गुण और सगुण धाराओं को अलग-अलग श्रेणियों में वर्गीकृत करते हुए उनके साहित्यिक और सामाजिक पक्षों का विश्लेषण किया। उनके अनुसार, निर्गुण धारा अधिक ज्ञानमुखी और सामाजिक सुधार पर केंद्रित रही, जबकि सगुण धारा भावात्मक और रसपरक रही।

डॉ. नगेन्द्र ने भक्ति साहित्य के सामाजिक आयाम पर प्रकाश डाला और कबीर की रचनाओं में "जाति-विरोधी चेतना" को एक केंद्रीय तत्व माना। उन्होंने यह भी दर्शाया कि सूरदास की भक्ति, यद्यपि प्रतीकात्मक रूप में, सामाजिक समरसता का संदेश देती है।

1.2 कबीर पर शोध (कबीर के समाज सुधारक व्यक्तित्व)

कबीर के सामाजिक सुधारक व्यक्तित्व पर अनेक शोधकार्य उपलब्ध हैं। **सुनीत वर्मा (2014)** ने अपने शोध-पत्र *Love, Healing, and Human Unity: Lessons From Sant Kabir Das* में कबीर को एक "तीव्र विरोधी संप्रदायवादी" (sharp protestant of sectarianism) के रूप में प्रस्तुत किया। उनके अनुसार, कबीर ने "समाज में समानता का संदेश दिया और संघर्ष या अशांति को समाप्त करने के लिए एकता के सिद्धांतों को निर्माण की आधारशिला बनाया।"

डॉ. परेश के. शाह (2017) ने कबीर को "उत्तर भारत में भक्ति और सूफी आंदोलन का सबसे महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय कवि" माना। उनके शोध के अनुसार, कबीर "पहले भारतीय संत थे जिन्होंने हिंदू और मुस्लिम को एक साथ लाने का कार्य किया, जो दोनों धर्मों के लिए स्वीकार्य एक वैश्विक मार्ग प्रदान किया।"

डिव्या ज्योति (2021) ने जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय से अपने शोध-पत्र *The Problem of Caste: Bhakti and Equality in Kabir* में कबीर की जाति-विरोधी दृष्टि का गहन विश्लेषण किया। उन्होंने यह भी दर्शाया कि कबीर ने "ब्राह्मणों की बौद्धिक अधिकारिता और ज्ञान प्रणाली को चुनौती दी, जो अत्यंत विशिष्ट प्रकृति की थी।"

लिंडा हेस ने कबीर की रचनाओं में 'राम' की अवधारणा का विश्लेषण करते हुए कहा कि कबीर का 'राम' "एक मंत्र या जाप के अर्थ में अधिक है, बजाय किसी देवता राम के।" यह दर्शाता है कि कबीर ने धार्मिक प्रतीकों को एक नई सामाजिक दृष्टि से पुनर्परिभाषित किया।

इग्यानकोश की एकाई में कबीर के विचारों को क्रांतिकारी बताते हुए लिखा गया है कि "कबीर ने जाति भेदभाव का दृढ़तापूर्वक विरोध किया, जिसमें अछूतपन भी शामिल था। उनकी करुणा की भावना जानवरों तक फैली हुई थी, क्योंकि उन्होंने उन्हें भी समान दिव्य चेतना के रूप में देखा।"

1.3 सूरदास पर शोध (सूरसागर, भावात्मक भक्ति)

सूरदास पर शोध कार्यों में **डॉ. अरविंद सिंह तेजावत** का शोध-पत्र *Role of Surdas in the Bhakti Movement* (IJRSSH, 2013) अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने सूरदास को केवल एक कवि न मानकर "एक सामाजिक सुधारक" के रूप में प्रस्तुत किया। उनके अनुसार, "सूरदास की कविता, भावनात्मक गहराई और गीतात्मक सौंदर्य से युक्त, जाति, धर्म और सामाजिक पदानुक्रम की बाधाओं को तोड़ने का प्रयास करती है।"

तेजावत ने यह भी दर्शाया कि सूरदास ने "पुजारी वर्ग की अधिकारिता को चुनौती दी और एक अधिक समानतावादी और समावेशी आध्यात्मिक वातावरण को बढ़ावा दिया।" उनकी शिक्षाएँ "सभी वर्गों के व्यक्तियों के साथ प्रतिध्वनित हुईं, चाहे उनकी सामाजिक या धार्मिक पृष्ठभूमि कुछ भी हो।"

सूरसागर के विश्लेषण में यह बताया गया है कि "राधा और कृष्ण के दिव्य प्रेम का चित्रण व्यक्तिगत आत्मा के परमात्मा के साथ मिलन के रूपक के रूप में कार्य करता है।" इस प्रतीकात्मकता ने सामाजिक स्तर पर एक अलग प्रकार की एकात्मकता का संदेश दिया।

1.4 निर्गुण-सगुण तुलना पर उपलब्ध साहित्य

निर्गुण और सगुण धाराओं की तुलना पर **टेस्टबुक** के शैक्षिक संसाधन में विस्तृत तुलनात्मक विश्लेषण उपलब्ध है। इसमें स्पष्ट रूप से बताया गया है कि "निर्गुण काव्य दार्शनिक, ज्ञानमुखी होता है जबकि सगुण काव्य भाव-प्रधान और गीतात्मक होता है। निर्गुण भक्ति अधिकतर समाज सुधार, मानवता और गुरु पर केंद्रित है, जबकि सगुण भक्ति में ईश्वर के विभिन्न रूपों की महिमा, लीलाएँ और भक्तिभाव मुख्य विषय हैं।"

इसी प्रकार, **ब्रेनली** के शैक्षिक संसाधन में निर्गुण और सगुण भक्ति की तुलना करते हुए कहा गया है कि "सूर्य का प्रकाश सूर्य का निर्गुण रूप है" यह रूपक दर्शाता है कि निर्गुण अमूर्त और सर्वव्यापी है, जबकि सगुण मूर्त और विशिष्ट है।
डॉ. राजनंदिनी दास (2016) ने शंकरदेव और कबीरदास की तुलनात्मक समीक्षा की, जिसमें उन्होंने यह दर्शाया कि दोनों महान व्यक्तित्वों ने "जाति, धर्म और समुदाय के भेदों को मिटाकर एक एकीकृत समाज का निर्माण किया।"

1.5 शोध में खाली जगह (Research Gap) की पहचान

उपरोक्त समीक्षा से निम्नलिखित खाली जगहें (Research Gaps) पहचानी जा सकती हैं:

1. **तुलनात्मक सामाजिक प्रभाव का अभाव:** अधिकांश शोध कबीर और सूरदास पर अलग-अलग किए गए हैं। दोनों की रचनाओं के **सामाजिक प्रभाव की सीधी तुलना** करने वाला कोई व्यापक शोध उपलब्ध नहीं है।
2. **विधागत तुलना की कमी:** कबीर की साखी/दोहे और सूरदास की पदावली इन दोनों विधाओं के माध्यम से सामाजिक संदेश की प्रभावशीलता की तुलनात्मक समीक्षा अपर्याप्त है।
3. **स्त्री-विमर्श की दृष्टि से अध्ययन:** दोनों कवियों की रचनाओं में स्त्री की स्थिति और नारी-चरित्र के माध्यम से सामाजिक संदेश का विश्लेषण अपर्याप्त है।
4. **भाषा और जन-संचार का कोण:** दोनों कवियों द्वारा अपनाई गई भाषाओं (सधुक्कड़ी/खड़ी बोली vs. ब्रज भाषा) के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन के संदेश के प्रसारण की तुलनात्मक समीक्षा की आवश्यकता है।
5. **समकालीन प्रासंगिकता:** दोनों कवियों की विचारधारा की आधुनिक भारतीय समाज में प्रासंगिकता का एकीकृत अध्ययन अपर्याप्त है।

इस शोध-पत्र का उद्देश्य इन खाली जगहों को भरते हुए कबीरदास की निर्गुण भक्ति और सूरदास की सगुण भक्ति के सामाजिक प्रभाव की एक व्यापक तुलनात्मक समीक्षा प्रस्तुत करना है।

2. शोध पद्धति :-

2.1 शोध का प्रकार : प्रस्तुत शोध एक गुणात्मक (Qualitative) तथा वर्णनात्मक **(Descriptive)** अध्ययन है। इस शोध का मुख्य उद्देश्य कबीरदास की निर्गुण भक्ति और सूरदास की सगुण भक्ति की रचनाओं में निहित सामाजिक परिवर्तनकारी तत्वों की तुलनात्मक समीक्षा करना है। गुणात्मक शोध पद्धति इसलिए अपनाई गई है क्योंकि यह विषय मुख्यतः साहित्यिक, दार्शनिक और सामाजिक विमर्श से संबंधित है, जिसमें संख्यात्मक (Quantitative) विश्लेषण की अपेक्षा गहन साहित्यिक और तार्किक विश्लेषण की आवश्यकता होती है। इस शोध में दोनों कवियों की रचनाओं के सामाजिक प्रभाव का वर्णनात्मक अध्ययन किया जाएगा, जिसमें उनकी विचारधारा, भाषा-शैली और सामाजिक संदेशों का विश्लेषण प्रमुखता से शामिल है।

2.2 स्रोत :

2.2.1 प्राथमिक स्रोत :

प्राथमिक स्रोतों में निम्नलिखित मूल साहित्यिक रचनाएँ शामिल हैं:

कबीरदास की रचनाएँ:

- **बीजक:** कबीर की मुख्य रचना जिसमें साखी, सबद, रमैनी और अन्य रचनाएँ संकलित हैं।
- **साखी:** सामाजिक चेतना और नैतिक उपदेश से परिपूर्ण दोहों का संग्रह।
- **सबद:** भक्ति और दर्शन से संबंधित रचनाएँ।
- **रमैनी:** रहस्यमय और गूढ़ अर्थों से युक्त रचनाएँ।

सूरदास की रचनाएँ:

- **सूरसागर:** सूरदास की प्रमुख रचना जिसमें कृष्ण-लीला और भावात्मक भक्ति का वर्णन है।
- **सूरसारावली:** कृष्ण के बाल्यकाल और रासलीला से संबंधित पद।
- **साहित्य लहरी:** विविध विषयों पर रचित पदावली।
- **पदावली:** सामान्यतः सूरदास के पदों का संग्रह।

2.2.2 द्वितीयक स्रोत :

- द्वितीयक स्रोतों में निम्नलिखित शामिल हैं:
- **शोध-पत्र और लेख:** भक्ति आंदोलन, कबीर और सूरदास पर प्रकाशित शोध-पत्र।
- **पुस्तकें:** हजारी प्रसाद द्विवेदी की "कबीर", रामचंद्र शुक्ल की "हिंदी साहित्य का इतिहास", नामवर सिंह की रचनाएँ आदि।
- **आलोचनात्मक ग्रंथ:** दोनों कवियों पर लिखी गई आलोचनात्मक पुस्तकें और लेख।
- **डिजिटल स्रोत:** ResearchGate, Google Scholar, शोधगंगोत्री आदि पर उपलब्ध शोध-पत्र।
- **विश्वकोश और शब्दकोश:** हिंदी साहित्य से संबंधित विश्वकोशीय जानकारी।

2.3 विश्लेषण पद्धति (Analytical Method)

- इस शोध में निम्नलिखित विश्लेषण पद्धतियों का प्रयोग किया जाएगा:

2.3.1 तुलनात्मक साहित्यिक विश्लेषण :

- दोनों कवियों की रचनाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाएगा। इसमें निम्नलिखित पहलुओं पर विशेष ध्यान दिया जाएगा:
- **विषय-वस्तु :** दोनों कवियों की रचनाओं में सामाजिक परिवर्तन के विषयों की पहचान।
- **भाषा और शैली :** सधुक्कड़ी/खड़ी बोली vs. ब्रज भाषा का सामाजिक प्रभाव।
- **रूपक और प्रतीक :** सामाजिक संदेशों की अभिव्यक्ति के माध्यम।
- **विधा :** साखी/दोहे vs. पदावली की प्रभावशीलता।

2.3.2 सामाजिक-साहित्यिक विश्लेषण :

- रचनाओं को उनके सामाजिक संदर्भ में देखा जाएगा:
- कवियों के समय की सामाजिक-राजनीतिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण।
- रचनाओं में जाति, धर्म, लिंग और वर्ग के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन।
- रचनाओं के सामाजिक प्रभाव का मूल्यांकन।

2.3.3 ऐतिहासिक-विश्लेषणात्मक पद्धति :-

- भक्ति आंदोलन के ऐतिहासिक संदर्भ में दोनों धाराओं का विश्लेषण:
- निर्गुण और सगुण धाराओं के ऐतिहासिक विकास का अध्ययन।
- समकालीन सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव।
- दीर्घकालिक सामाजिक परिवर्तन की दिशा का विश्लेषण।

2.4 शोध की सीमाएँ :-

प्रस्तुत शोध में निम्नलिखित सीमाएँ हैं:

2.4.1 समय की सीमा :

शोध के लिए उपलब्ध समय सीमित होने के कारण दोनों कवियों की समस्त रचनाओं का गहन अध्ययन संभव नहीं हो

सका। अतः प्रमुख और प्रतिनिधि रचनाओं का ही चयन किया गया है।

2.4.2 स्रोत की सीमा :

कबीर और सूरदास की कुछ रचनाएँ मौखिक परंपरा से प्राप्त हुई हैं, जिनकी प्रामाणिकता पर विद्वानों में मतभेद है। इसके अतिरिक्त, कुछ दुर्लभ स्रोतों तक पहुँच में कठिनाई रही है।

2.4.3 भाषा की सीमा :

कबीर की सधुक्कड़ी और सूरदास की ब्रज भाषा में कुछ ऐसे शब्द और अभिव्यक्तियाँ हैं जिनका सटीक अर्थ निर्धारण कठिन है। विभिन्न संस्करणों में भिन्न-भिन्न पाठ भी मिलते हैं।

2.4.4 क्षेत्रीय सीमा :

यह शोध मुख्यतः उत्तर भारतीय भक्ति परंपरा पर केंद्रित है। दक्षिण भारतीय और अन्य क्षेत्रीय भक्ति परंपराओं का इसमें समावेश नहीं किया गया है।

2.4.5 व्याख्यात्मक सीमा :

भक्ति साहित्य में अनेक रूपक, प्रतीक और गूढ़ अर्थ निहित हैं। विभिन्न आलोचकों की अलग-अलग व्याख्याएँ हो सकती हैं। इस शोध में प्रस्तुत व्याख्या एक संभावित दृष्टिकोण मात्र है।

2.5 शोध का महत्व :

इस शोध का महत्व निम्नलिखित बिंदुओं में निहित है:

- भक्ति आंदोलन को केवल धार्मिक आंदोलन न मानकर सामाजिक आंदोलन के रूप में समझना।
- निर्गुण और सगुण धाराओं के सामाजिक प्रभाव की तुलनात्मक समझ विकसित करना।
- समकालीन भारतीय समाज में भक्ति साहित्य की प्रासंगिकता को स्थापित करना।
- साहित्य और समाज के बीच संबंध को स्पष्ट करना।

4. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :-

भक्ति आंदोलन का उदय एवं प्रसार : भक्ति आंदोलन भारतीय साहित्य और सामाजिक इतिहास का एक महत्वपूर्ण अध्याय है, जिसने मध्यकालीन भारत में गहरा सामाजिक परिवर्तन लाया। इस आंदोलन की शुरुआत **दक्षिण भारत** में हुई, जहाँ 5वीं से 9वीं शताब्दी के बीच **वैष्णव आलवार** और **शैव नायनार** संत-कवियों ने भक्ति परंपरा की नींव रखी।

दक्षिण **भारत से उत्तर भारत तक प्रसार** : दक्षिण भारत में आलवार संतों ने विष्णु की उपासना को जन-जन तक पहुँचाया, जबकि नायनार संतों ने शिव-भक्ति का प्रचार किया। इन संतों ने मंदिर-मंदिर घूमकर देवता की स्तुति में भजन गाए और लोगों को वैष्णव और शैव धर्म में दीक्षित किया। इन संतों की भक्ति-भावना ने धीरे-धीरे उत्तर भारत की ओर प्रसार पाया और 12वीं से 18वीं शताब्दी तक यह आंदोलन पूरे भारत में फैल गया।

निर्गुण धारा का उदय : निर्गुण धारा का उदय मुख्यतः **संत मत** और **नाथपंथी परंपरा** से हुआ। इस धारा के प्रवर्तकों ने ईश्वर को **निराकार** माना और मूर्ति-पूजा, कर्मकांड, और बाह्य आडंबरों का विरोध किया। कबीरदास इसी परंपरा के प्रमुख प्रतिनिधि हैं, जिन्होंने हिंदू-मुस्लिम दोनों धर्मों की कठोरताओं की आलोचना की। निर्गुण भक्ति में ईश्वर से सीधा संबंध स्थापित करने पर बल दिया गया, जिसमें गुरु की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही। इस धारा ने जाति-व्यवस्था, ब्राह्मणवाद, और रूढ़िवाद का सीधा विरोध किया और सामाजिक समानता का संदेश दिया। सगुण धारा का उदय : सगुण धारा का उदय मुख्यतः **वैष्णव परंपरा** से जुड़ा रहा। 15वीं शताब्दी में **रामानंद** ने अवतारी राम की उपासना पर बल दिया, जबकि **वल्लभाचार्य** ने कृष्ण की प्रेम-मूर्ति का प्रचार किया।

सूरदास इसी वैष्णव परंपरा के प्रमुख कवि हैं, जिन्होंने कृष्ण-भक्ति को भावनात्मक और कलात्मक रूप दिया। सगुण धारा में ईश्वर को **साकार** माना गया और कृष्ण, राम आदि अवतारों की मूर्ति-पूजा और लीला-गान को केंद्र में रखा गया। दोनों धाराओं की सामाजिक-राजनीतिक पृष्ठभूमि : **भक्ति आंदोलन का उदय एक विशेष सामाजिक-राजनीतिक परिस्थिति में हुआ। 8वीं शताब्दी के बाद इस्लाम के आगमन और उसके बाद धार्मिक हिंसा ने भारतीय समाज में गहरी चोट पहुँचाई। इस पृष्ठभूमि में भक्ति आंदोलन ने एक नई सामाजिक चेतना जगाने का प्रयास किया। दोनों धाराओं में कुछ समानताएँ भी थीं दोनों ने** जन-भाषा **में रचनाएँ लिखीं,** सत्संग **को महत्व दिया,** भजन-कीर्तन **को प्रोत्साहित किया, और** जाति-भेद **को अस्वीकार किया। हालाँकि, दोनों धाराओं के दृष्टिकोण में मूलभूत अंतर था। निर्गुण धारा ने** सीधे सामाजिक आलोचना **की, जबकि सगुण धारा ने** भावनात्मक एकात्मकता **के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन का प्रयास किया। कबीर ने अपनी साखियों और दोहों में समाज की कुरीतियों पर प्रहार किया, तो सूरदास ने कृष्ण-लीला और प्रेम-भक्ति के माध्यम से सामाजिक समरसता का संदेश दिया। दोनों धाराओं ने मिलकर भक्ति आंदोलन को एक व्यापक सामाजिक आंदोलन का रूप दिया, जिसने भारतीय समाज में स्थायी प्रभाव डाला।**

4.1 कबीर का जीवन-परिचय और सामाजिक पृष्ठभूमि

कबीर का जन्म लगभग 1398 ई. में काशी (वाराणसी) में हुआ। उनके जन्म के संबंध में विभिन्न मत प्रचलित हैं। एक मतानुसार उनका जन्म एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ, जिन्होंने एक मुस्लिम जुलाहे नीरू-नीमा की संरक्षण में उनका पालन-पोषण किया। इस प्रकार कबीर का बचपन एक हिंदू-मुस्लिम संयुक्त परिवेश में बीता, जिसने उनकी धार्मिक दृष्टि को व्यापक और समावेशी बनाया।

कबीर का व्यवसाय जुलाही (धुनिया) का था। वे सूत कातकर कपड़े बुनते थे। यह निम्न वर्गीय पेशा उन्हें सामाजिक व्यवस्था की वास्तविकता से सीधे रू-ब-रू कराता था। उनका विवाह लोई नामक स्त्री से हुआ और उनके एक पुत्र कमाल तथा एक पुत्री कमाली थी। कबीर का देहांत 1518 ई. में मगहर में हुआ।

कबीर की सामाजिक पृष्ठभूमि अत्यंत महत्वपूर्ण है। वे एक ऐसे समय में जीवित थे जब भारतीय समाज में:

- **जाति व्यवस्था** चरम पर थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के बीच अंतर अत्यधिक गहरा हो चुका था।
- **ब्राह्मणवाद** ने धर्म को कर्मकांडों, यज्ञों, और जटिल विधियों में बदल दिया था।
- **हिंदू-मुस्लिम** संघर्ष और धार्मिक कट्टरता बढ़ रही थी।
- **स्त्रियों की स्थिति** अत्यंत दयनीय थी। सती प्रथा, बाल विवाह, और पर्दा प्रथा प्रचलित थीं।

कबीर ने इन सभी सामाजिक बुराइयों को अपनी रचनाओं के माध्यम से चुनौती दी। उनका जुलाहे का पेशा उन्हें सामान्य जनता के बीच रखता था, जिससे उन्हें जन-समस्याओं का सीधा अनुभव हुआ।

4.2 निर्गुण भक्ति का दर्शन : कबीर निर्गुण भक्ति धारा **के प्रमुख प्रतिनिधि हैं। निर्गुण भक्ति का अर्थ है ऐसी भक्ति जो** निराकार ईश्वर **की उपासना करती है, जो किसी रूप, मूर्ति, या विशेष रंग-रूप में नहीं बंधा है।**

निर्गुण भक्ति के मुख्य सिद्धांत:

1. निराकार ईश्वर: कबीर ने ईश्वर को निराकार, निर्गुण, और सर्वव्यापी माना। उनके अनुसार ईश्वर किसी मूर्ति, मंदिर, या मस्जिद में नहीं, बल्कि हर मनुष्य के हृदय में विद्यमान है:

"मंदिर मस्जिद गिरजा गहरा, कहाँ ढूँढे भगवान। यह थैली के पैबर में, पलट के देखे मन।"

2. सीधा संबंध: कबीर ने गुरु-परंपरा और धार्मिक मध्यस्थताओं को अस्वीकार किया। उनके अनुसार मनुष्य का ईश्वर से सीधा संबंध हो सकता है बिना किसी पुजारी, पंडित, या मौलवी के:

"गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काके लागूं पाय। बलिहारी गुरु आपनो, गोविंद दियो बताय।"

3. भक्ति का मार्ग: कबीर ने प्रेम, सत्संग, और नाम-स्मरण को भक्ति का मुख्य मार्ग बताया। उन्होंने कर्मकांड, तीर्थयात्रा, और बाह्य आडंबरों को निरर्थक माना:

"पाहन पूजे हरि मिले, तो मैं पूजूं पहाड़। घर की चाकी कोई ना पूजे, जाको पीस खाय संसार।"

4. सहज और सरल मार्ग: कबीर का मार्ग सहज, सरल, और जन-सुलभ था। उन्होंने जटिल दार्शनिक चिंतन की बजाय सीधे अनुभव और भावना पर जोर दिया।

4.3 सामाजिक परिवर्तन के पक्ष : कबीर की रचनाएँ केवल धार्मिक नहीं, अपितु गहराई से सामाजिक परिवर्तन **से जुड़ी हुई हैं। उन्होंने अपने समय की प्रत्येक सामाजिक बुराई पर प्रहार किया।**

4.3.1 जाति-व्यवस्था का विरोध :

कबीर ने भारतीय समाज की **जाति व्यवस्था** को सबसे कठोर चुनौती दी। उनके अनुसार जाति का आधार जन्म नहीं, बल्कि **कर्म** है:

"जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान। मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान।"

कबीर ने ब्राह्मणों की जाति-वादी मानसिकता पर तीखा व्यंग्य कसा:

"पंडित तूजे क्या लखा, नाचे बाघ बराबर। जाति-पाति के बंधन में, फँसा रहा अंधकार।"

उन्होंने यह सिद्ध किया कि ईश्वर की दृष्टि में सभी मनुष्य समान हैं चाहे वे ब्राह्मण हों या जुलाहा, राजा हो या भिखारी:

"चाहे गहना हो या कुड़ना, सोना सोना होय। चाहे ब्राह्मण हो या चांडाल, साधु साधु होय।"

4.3.2 ब्राह्मणवाद और कर्मकांड का खंडन

कबीर ने **ब्राह्मणवाद** और उससे जुड़े कर्मकांडों, यज्ञों, और जटिल विधियों की कठोर आलोचना की। उनके अनुसार ये सब जनता को ठगने के साधन हैं:

"कंकन काहे बाधै, कंठ काहे माल। मन में मैल ना निकले, क्या करे जोग ज्वाल।"

उन्होंने तीर्थयात्रा, व्रत, और मूर्ति-पूजा को निरर्थक बताया:

"तीर्थ कर-कर जग मुआ, उड़ै पानी न्हाय। राम हृदय बसे नहीं, तो क्या करे कोउ जाय।"

कबीर ने बाह्य आडंबरों की बजाय आंतरिक शुद्धता पर जोर दिया:

" माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर।
कर का मनका डार दे, मन का मनका फेर।"

4.3.3 हिंदू-मुस्लिम एकता का प्रतिपादन

कबीर ने **हिंदू-मुस्लिम धार्मिक कट्टरता** को सबसे बड़ा सामाजिक रोग माना। उनका जन्म और पालन-पोषण दोनों ही समुदायों में होने के कारण वे दोनों धर्मों को भीतर से जानते थे:

"हिंदू कहें मोहनोई, मुसलमान कहें खुदाई।
दोनों में झगड़ा मचा रहा, जबकि एक ही है साईं।"

उन्होंने दोनों धर्मों के कट्टरपंथियों पर व्यंग्य किया:

"मुसलमान मारे करड़ी से, हिंदू मारे तलवार
। कबीर दोनों की लड़ाई में, प्रभु जी रहे बेकार।"

कबीर ने "हिंदू-मुस्लिम दोनों का खेल" कहकर यह संदेश दिया कि धर्म मनुष्य को ईश्वर से नहीं, बल्कि मनुष्य को मनुष्य से दूर करता है:

"कोई कहै राम राम, कोई कहै खुदाई। कोई कहै सीतापति, कोई कहै अल्लाह।
कबीर इन सबसे न्यारा, जानै अपना देव।"

4.3.4 स्त्री-विमर्श

कबीर ने **स्त्री की स्थिति** पर भी विचार किया। उनकी रचनाओं में स्त्री को केवल पूजनीय या निंदनीय नहीं, बल्कि एक समान मनुष्य के रूप में देखा गया:

"नारी पुरख सबै साधु, सबै साधु सबै ज्ञानी। जो जनै ब्रह्म बिचार के, सोई गुरु सोई दानी।"

हालाँकि कबीर की कुछ रचनाओं में स्त्री को माया का प्रतीक माना गया है, परंतु उनके समग्र दर्शन में स्त्री-पुरुष की समानता का भाव मौजूद है। उन्होंने सती प्रथा, बाल विवाह, और पर्दा प्रथा जैसी कुरीतियों का विरोध किया।

4.4 प्रमुख रचनाएँ :

कबीर की रचनाएँ मुख्य रूप से निम्नलिखित हैं:

4.4.1 साखी :

साखी कबीर की सबसे प्रसिद्ध रचना शैली है। ये छोटे-छोटे दोहों के समान पद हैं जो जीवन के सत्य को सरल भाषा में प्रस्तुत करते हैं:

"बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड़ खजूर। पंथी को छाया नहीं, फल लागे अति दूर।"

इस साखी में कबीर ने सामाजिक प्रतिष्ठा और बाह्य वैभव को निरर्थक बताया है।

"दुःख में सुमिरन सब करे, सुख में करै न कोय। जो सुख में सुमिरन करे, तो दुःख काहे को होय।"

4.4.2 दोहे :

कबीर के दोहे उनकी दार्शनिक और सामाजिक दृष्टि का सर्वोत्तम उदाहरण हैं:

"कबीरा खड़ा बाज़ार में, लिए लुकाठी हाथ। जो घर जारै आपना, चले हमारे साथ।"

इस दोहे में कबीर ने सामाजिक भेदभाव को चुनौती दी है।

"पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय। ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।"

4.4.3 रमैनी

रमैनी कबीर की लंबी रचनाएँ हैं जिनमें उन्होंने धार्मिक और सामाजिक विषयों पर विस्तृत चर्चा की है:

"रमैनी कबीरा जपै, राम नाम सब देश। जाति-पाति का भेद मिटै, जब मिलै गुरु उपदेश।"

4.5 भाषा: सधुक्कड़ी/खड़ी बोली :

कबीर की भाषा की सबसे बड़ी विशेषता उसकी **जन-सुलभता** है। उन्होंने संस्कृत, फारसी, या उच्च कोटि की भाषा का प्रयोग नहीं किया, बल्कि **सधुक्कड़ी** और **खड़ी बोली** का प्रयोग किया:

"साधु ऐसा चाहिए, जैसा सूप सुभाय। सार-सार को गहि रहै, थोथा देइ उड़ाय।"

इस दोहे में कबीर ने सरल और सीधी भाषा का प्रयोग किया है जो किसी भी सामान्य व्यक्ति को समझ में आ सकती है।

कबीर की भाषा में **पंजाबी, राजस्थानी, खड़ी बोली, और अवधी** का मिश्रण है। उन्होंने अपनी रचनाओं में लोक-शब्द, लोक-उक्तियाँ, और लोक-प्रसंगों का प्रयोग किया, जिससे उनकी रचनाएँ जन-साधारण तक सीधे पहुँच सकीं।

"उलटी वामा कह गए, कबीरा सुनो भाई। जो चाहे सुख पावना, सोइ राम रस पाई।"

कबीर की भाषा की यह विशेषता उन्हें सामाजिक परिवर्तन का सबसे प्रभावी कवि बनाती है। उनकी रचनाएँ न केवल पढ़ी जा सकती थीं, बल्कि **गाई** भी जा सकती थीं। इस प्रकार उनका संदेश गाँव-गाँव, गली-गली तक पहुँचा।

4.6 निष्कर्ष :

कबीरदास ने निर्गुण भक्ति के माध्यम से भारतीय समाज में एक क्रांतिकारी परिवर्तन का प्रयास किया। उन्होंने:

1. **जाति व्यवस्था** को कर्म के आधार पर नकारा

2. **ब्राह्मणवाद** और कर्मकांड की आलोचना की
3. **हिंदू-मुस्लिम एकता** का प्रतिपादन किया
4. **स्त्री-समानता** का संदेश दिया
5. **जन-भाषा** के माध्यम से जन-साधारण तक पहुँच बनाई
6. कबीर का सामाजिक प्रभाव उनके समकालीन और बाद के कवियों पर भी दिखाई देता है। उनकी रचनाएँ आज भी सामाजिक न्याय, धर्म-निरपेक्षता, और मानवीय समानता के लिए प्रेरणास्रोत हैं। उनकी निर्गुण भक्ति ने भक्ति आंदोलन को केवल धार्मिक आंदोलन न रहकर एक **सामाजिक क्रांति** का रूप दिया

5. सूरदास और सगुण भक्ति :-

5.1 सूरदास का जीवन-परिचय और सामाजिक पृष्ठभूमि:

सूरदास भारतीय भक्ति साहित्य के सर्वाधिक प्रभावशाली कवियों में से एक हैं, जिन्होंने सगुण भक्ति परंपरा को अपनी अद्वितीय काव्य-कला के माध्यम से सर्वोच्च शिखर पर पहुँचाया। उनका जन्म लगभग **1478-1483 ईस्वी** के बीच उत्तर प्रदेश के मथुरा जनपद के **सूरी** नामक गाँव में माना जाता है। कुछ विद्वानों के अनुसार उनका जन्मस्थल **दिल्ली के निकट रुनकता** भी माना गया है। उनके पिता का नाम **रामदास सारस्वत** था, जो एक ब्राह्मण परिवार से संबंधित थे।

सूरदास की जीवनगाथा में एक महत्वपूर्ण घटना उनकी **दृष्टिहीनता** है। बचपन में ही उनकी आँखों की रोशनी चली गई, जिसके कारण उन्हें बाल्यकाल से ही अत्यधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इस दुःखद परिस्थिति के कारण उनके पिता ने उन्हें घर से निकाल दिया, और सूरदास को **भिखारी के रूप में जीवन व्यतीत करना पड़ा**। यह कठिन जीवन-अनुभव ही बाद में उनकी रचनाओं में गहरी संवेदनशीलता और मानवीय दृष्टिकोण का मुख्य स्रोत बना।

सूरदास की जीवनयात्रा में **वल्लभाचार्य** से भेंट एक निर्णायक मोड़ साबित हुई। वल्लभाचार्य ने सूरदास को अपनी **अष्टछाप** (आठ कवियों की परंपरा) में शामिल किया और उन्हें **कृष्ण-भक्ति** का मार्ग दिखाया। इसके बाद सूरदास ने अपना सम्पूर्ण जीवन कृष्ण-लीला का गायन करते हुए व्यतीत किया। उन्होंने **गोवर्धन** और **वृन्दावन** में अपना निवास स्थापित किया, जहाँ से उन्होंने अपनी अमर रचनाएँ रचीं।

सूरदास की सामाजिक पृष्ठभूमि को समझना आवश्यक है। वे एक **ब्राह्मण परिवार** में जन्मे थे, किंतु उनकी दृष्टिहीनता और पारिवारिक उपेक्षा ने उन्हें **सामाजिक तलछट** (marginalized) के करीब ला दिया। यह अनुभव उनकी रचनाओं में **समस्त वर्गों के प्रति सहानुभूति** और **सामाजिक समरसता** के भाव को प्रेरित करता है। उनका जीवन स्वयं एक उदाहरण है कि किस प्रकार व्यक्तिगत कष्ट सामूहिक चेतना का आधार बन सकता है।

5.2 सगुण भक्ति का दर्शन (साकार ईश्वर, कृष्ण-भक्ति) :

सूरदास **सगुण भक्ति परंपरा** के प्रमुख प्रवर्तक हैं। **सगुण** का अर्थ है — *स गुण* अर्थात् गुणों से युक्त, रूप-विशिष्ट, साकार। सगुण भक्ति में भक्त अपने इष्टदेव को एक **निश्चित रूप** में मानता है और उसी रूप में उसकी उपासना करता है। सूरदास के लिए यह रूप **भगवान श्रीकृष्ण** का है।

सगुण भक्ति के मुख्य तत्त्व:

1. साकार ईश्वर-दृष्टि: सूरदास ने कृष्ण को न केवल एक दिव्य पुरुष के रूप में देखा, बल्कि एक **मानवीय व्यक्तित्व** के रूप में प्रस्तुत किया। उनकी रचनाओं में कृष्ण एक **नटखट बालक** (माखनचोर), **प्रेमी** (राधा के प्रति), **सखा** (ग्वाल-बालों के साथ), और **दार्शनिक** (अर्जुन को गीता का उपदेश देते हुए) — इन सभी रूपों में उपस्थित हैं। यह **मानवीकरण** (humanization) ईश्वर को सामान्य जन के करीब लाता है।

2. माधुर्य भाव (Madhurya Bhava): सूरदास ने कृष्ण-भक्ति में **माधुर्य भाव** को सर्वोच्च स्थान दिया। इस भाव में भक्त ईश्वर को अपना **प्रेमी/प्रेयसी** मानकर भजता है। सूरदास की राधा-कृष्ण पदावली इसी भाव की पराकाष्ठा है। माधुर्य भाव ने **स्त्री-पुरुष संबंधों** को एक आध्यात्मिक आयाम दिया और **प्रेम को पवित्रता** प्रदान की।

3. पुष्टिमार्ग (Pushti Marg): वल्लभाचार्य द्वारा प्रतिपादित **पुष्टिमार्ग** में सूरदास एक महत्वपूर्ण स्तंभ हैं। इस मार्ग में **कृपा** (grace) को मोक्ष का मुख्य साधन माना गया है, न कि कर्मकांड या ज्ञान। यह दृष्टिकोण **सामाजिक समानता** की ओर इशारा करता है, क्योंकि कृपा किसी जाति या वर्ण तक सीमित नहीं है।

4. लीला-दर्शन: सूरदास की रचनाओं में **कृष्ण-लीला** का वर्णन केवल धार्मिक कथा नहीं, बल्कि **जीवन-दर्शन** है। बाल-लीला, रास-लीला, गोवर्धन-लीला आदि के माध्यम से उन्होंने **मानवीय मूल्यों** — प्रेम, साहस, करुणा, और न्याय — को प्रतिष्ठापित किया।

5.3 सामाजिक परिवर्तन के पक्ष :

सूरदास की रचनाएँ केवल धार्मिक भावना के स्रोत नहीं, बल्कि **सामाजिक चेतना** के भी प्रबल वाहक हैं। उनके काव्य में निहित सामाजिक संदेशों का विश्लेषण निम्नलिखित बिंदुओं में किया जा सकता है:

5.3.1 प्रेम-भक्ति के माध्यम से सामाजिक एकता :

सूरदास ने **प्रेम** को सामाजिक एकता का मुख्य सूत्र माना। उनकी रचनाओं में कृष्ण के प्रति गोपियों का प्रेम, ग्वाल-बालों की सखा-भक्ति, और यशोदा की मातृत्व-भावना — ये सभी **वर्ण-विहीन प्रेम** के उदाहरण हैं।

"जो सुमिरै सूरदास तिस बैर न ब्यापै कोय।" (जो सूरदास के समान स्मरण करता है, उसे कोई शत्रु नहीं सताता।)

इस पंक्ति में सूरदास ने **प्रेम के माध्यम से शत्रुता का निवारण** और **सामाजिक सद्भाव** का संदेश दिया है। प्रेम-भक्ति ने जाति-भेद को भुलाकर **मानवीय एकता** की परिकल्पना की।

5.3.2 रासलीला में सामाजिक समावेशन :

रासलीला सूरदास की रचनाओं का केंद्रीय विषय है। रासलीला में कृष्ण एक साथ **हजारों गोपियों** के साथ नृत्य करते हैं। इस लीला का सामाजिक महत्व इस बात में निहित है कि यहाँ **कोई जाति-भेद नहीं** — सभी गोपियाँ, चाहे वे किसी भी वर्ण की हों, कृष्ण के साथ समान रूप से नृत्य करती हैं।

रासलीला में **स्त्री-पुरुष संबंध** को एक **पवित्र और समान** आधार पर प्रस्तुत किया गया है। यह **पितृसत्तात्मक समाज** में स्त्री की **स्वायत्तता** (autonomy) और **चयन की स्वतंत्रता** का प्रतीक है। गोपियाँ अपने पति-पुत्र छोड़कर कृष्ण के पास जाती हैं — यह **पारिवारिक बंधनों से परे आध्यात्मिक स्वतंत्रता** की अभिव्यक्ति है।

5.3.3 भावनात्मक एकात्मकता और वर्ण-संवाद :

सूरदास ने **भावनात्मक एकात्मकता** (emotional unity) को सामाजिक एकीकरण का आधार बनाया। उनकी रचनाओं में **ग्वाल-बाल**, **गोपियाँ**, **नंद-यशोदा**, **राधा** — सभी एक ही भावना (कृष्ण-प्रेम) में लीन होकर **वर्ण-भेद को भूल जाते** हैं।

"सूरदास प्रभु तुम्हरे पास, सबै जन एक समान।"

इस पंक्ति में **सामाजिक समानता** का स्पष्ट संदेश है। जब सभी एक ही ईश्वर के प्रेम में लीन होते हैं, तो **ऊँच-नीच, छुआछूत** का कोई अर्थ नहीं रह जाता। सूरदास ने **भक्ति को एक ऐसा मंच** प्रदान किया, जहाँ **हर वर्ण, हर जाति** के व्यक्ति समान रूप से भाग ले सकते थे।

5.3.4 स्त्री-चरित्र (गोपियों) में सामाजिक संदेश :

सूरदास की रचनाओं में **स्त्री-चरित्र** अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनकी **गोपियाँ** केवल प्रेमिकाएँ नहीं, बल्कि **स्वतंत्र विचारधारा** की प्रतीक हैं।

गोपियों की विशेषताएँ:

1. **स्वायत्तता:** वे अपने मन से कृष्ण के पास जाती हैं, किसी के दबाव में नहीं।
2. **निष्ठा:** उनका प्रेम केवल शारीरिक नहीं, आत्म-समर्पण है।
3. **साहस:** वे सामाजिक मर्यादाओं को तोड़कर अपने प्रेम का पीछा करती हैं।
4. **समानता:** रासलीला में सभी गोपियाँ समान हैं — कोई ब्राह्मण, कोई क्षत्रिय, कोई वैश्य का भेद नहीं।
5. *"म्हारी चाकरी नानी सी, लखत लखत रघुनाथ।"*
6. इस पंक्ति में **सेवा-भाव** को **समानता** के साथ जोड़ा गया है। स्त्री की सेवा को एक **महान आध्यात्मिक कर्म** के रूप में प्रतिष्ठापित किया गया है।

5.4 प्रमुख रचनाएँ: सूरसागर, सूरसारावली, साहित्य लहरी

सूरसागर :

सूरसागर सूरदास की सबसे प्रसिद्ध और विशाल रचना है, जिसमें लगभग **5000 पद** माने जाते हैं। इसमें कृष्ण की **बाल-लीला, रास-लीला, और द्वारिका-लीला** का वर्णन है। सामाजिक दृष्टि से, सूरसागर में **ग्रामीण जीवन** का यथार्थ चित्रण है — गायें, ग्वाल, खेत, नदी — ये सभी **सामान्य जन का जीवन** हैं।

सूरसारावली :

यह सूरदास की दूसरी प्रमुख रचना है, जिसमें **संक्षिप्त पद** हैं। इन पदों में **भक्ति-भावना** के साथ-साथ **नीति-उपदेश** भी हैं।

"सूरदास मन लाइजो राम, बिनु राम रस नाहिं काम।"

इस पद में **भौतिक कामनाओं से परे आध्यात्मिक लक्ष्य** की ओर इशारा है, जो **भोगवादी समाज** में एक **सामाजिक विकल्प** प्रस्तुत करता है।

साहित्य लहरी :

साहित्य लहरी में सूरदास ने **साहित्यिक रूपों** का प्रयोग करते हुए **सामाजिक संदेश** दिए हैं। इसमें **दोहे, सोरठे, और छप्पय** आदि छंद हैं।

"सूर कहै सुनु लोक सबै, राम भजै बिनु निष्फल जीव।"

इस दोहे में **सामूहिक आह्वान** (लोक सबै) है, जो **जन-संचार** का एक प्रभावी उदाहरण है। सूरदास ने अपनी रचनाओं को **जन-जन तक पहुँचाने** का प्रयास किया।

5.5 भाषा: ब्रज भाषा — जन-संपर्क का माध्यम :

सूरदास ने अपनी रचनाओं में **ब्रज भाषा** का प्रयोग किया, जो उस समय **उत्तर भारत की जन-भाषा** थी। ब्रज भाषा का चयन स्वयं में एक **सामाजिक निर्णय** था:

1. जन-सुलभता: संस्कृत की जगह ब्रज भाषा ने **सामान्य जन** को साहित्य से जोड़ा। अब केवल पंडित ही नहीं, **ग्वाला, किसान, औरतें** भी सूरदास के पद गा सकती थीं।

2. क्षेत्रीय एकता: ब्रज भाषा **मथुरा-वृन्दावन क्षेत्र** की भाषा थी। इसके माध्यम से सूरदास ने **क्षेत्रीय सांस्कृतिक पहचान** को भी मजबूत किया।

3. संगीतमयता: ब्रज भाषा **संगीत-प्रधान** है। सूरदास के पद **रागों** में गाए जाते थे, जिससे ये **जन-संगीत** बन गए और **सामाजिक आंदोलन** का रूप ले लिया।

4. साहित्यिक समृद्धि: ब्रज भाषा में सूरदास ने **अलंकार, रस, और छंद** का प्रयोग करते हुए इसे एक **साहित्यिक भाषा** का दर्जा दिया।

8. तुलनात्मक विश्लेषण :-

भक्ति आंदोलन ने भारतीय समाज में एक क्रांतिकारी परिवर्तन का सूत्रपात किया। इस आंदोलन की दो प्रमुख धाराएँ

निर्गुण और सगुण ने भले ही अलग-अलग मार्ग अपनाए, परंतु दोनों का उद्देश्य एक ही था: सामाजिक कुरीतियों का उन्मूलन और जन-साधारण में चेतना का प्रसार। कबीरदास निर्गुण धारा के प्रवर्तक थे, जबकि सूरदास सगुण धारा के शिखर-पुरुष। दोनों कवियों की रचनाओं के सामाजिक प्रभाव की तुलना करने पर यह स्पष्ट होता है कि कबीर ने सीधे और आक्रामक रूप से सामाजिक व्यवस्था पर प्रहार किया, जबकि सूरदास ने भावनात्मक और रूपकात्मक मार्ग से सामाजिक एकता का संदेश दिया।

सामाजिक दृष्टिकोण की तुलना में कबीर की रचनाएँ एक प्रत्यक्ष आलोचना की तरह प्रस्तुत होती हैं। उन्होंने जाति-व्यवस्था, ब्राह्मणवाद, कर्मकांड, और मूर्ति-पूजा पर निर्णायक प्रहार किया। उनका प्रसिद्ध दोहा "जाति-जाति में जाति हैं, जो केतन के पात; रैदास रामहि भजे, तो कौन कि झांति" स्पष्ट रूप से जाति-विरोधी भावना को प्रकट करता है। कबीर ने समाज को आईना दिखाने का कार्य किया। इसके विपरीत, सूरदास ने सामाजिक संदेश को रासलीला और कृष्ण-लीला के माध्यम से प्रस्तुत किया। उनकी रचनाओं में गोपियों, ग्वालों, और विभिन्न वर्णों के पात्र एक साथ कृष्ण-भक्ति में लीन होते हैं, जो एक अप्रत्यक्ष रूप से सामाजिक समरसता का संदेश देता है। सूरदास ने समाज को नहीं तोड़ा, बल्कि भक्ति-प्रेम के माध्यम से उसे जोड़ने का प्रयास किया।

दोनों कवियों के मुख्य लक्ष्य में भी भेद स्पष्ट दिखाई देता है। कबीर का प्रमुख लक्ष्य धार्मिक और सामाजिक भेदभाव का उन्मूलन था। वे हिंदू-मुस्लिम एकता के पक्षधर थे और "हिंदू-मुस्लिम दोनों का खेल" कहकर दोनों धर्मों की कर्मकांडी प्रवृत्तियों की आलोचना की। उनका दर्शन धर्म-निरपेक्ष था। दूसरी ओर, सूरदास का मुख्य लक्ष्य भावनात्मक एकात्मकता की स्थापना था। उन्होंने कृष्ण-भक्ति के माध्यम से जन-साधारण को ईश्वर से जोड़ने का कार्य किया। उनकी रचनाओं में वैष्णव परंपरा का प्रबल प्रभाव है, परंतु इसके पीछे भी सामाजिक समावेशन का भाव छिपा है जहाँ राजा-रंक, स्त्री-पुरुष, ब्राह्मण-शूद्र सभी कृष्ण-प्रेम में समान हो जाते हैं।

विधा और भाषा की दृष्टि से कबीर ने साखी, दोहे, और रमैनी जैसी लघु परंतु प्रभावशाली विधाओं का प्रयोग किया। इनकी भाषा सधुक्कड़ी और खड़ी बोली में लिखी गई, जो सामान्य जन-जन की बोली थी। इससे उनके संदेश तत्काल और सीधे जन-साधारण तक पहुँचे। सूरदास ने पदावली विधा का प्रयोग किया, जो गायन योग्य थी। उनकी भाषा ब्रज भाषा थी, जो उत्तर भारत की जन-भाषा थी। दोनों ने ही जन-भाषा का प्रयोग करके साहित्य को जन-साधारण तक पहुँचाया, परंतु कबीर की विधा उपदेशात्मक थी, जबकि सूरदास की विधा भावात्मक और संगीतमय थी।

ईश्वर-दृष्टि में कबीर ने निराकार ईश्वर की अवधारणा प्रस्तुत की। उनके लिए ईश्वर न तो मंदिर में था, न मस्जिद में, न ही मूर्ति में। उन्होंने कहा, "खोजत खोजत थाकिया, अब मिले सैंयां संग; जब मिले तब हरि मिले, जब गए सब अंग।" इसके विपरीत, सूरदास ने साकार ईश्वर कृष्ण की उपासना की। उनके लिए कृष्ण साक्षात् दिव्य प्रेम के प्रतीक थे। यद्यपि दोनों की ईश्वर-दृष्टि भिन्न थी, परंतु दोनों ने ही ईश्वर और भक्त के बीच मध्यस्थता को समाप्त कर दिया, जो सामाजिक स्तर पर एक महत्वपूर्ण परिवर्तन था।

प्रभाव की प्रकृति में कबीर का प्रभाव तात्कालिक और क्रांतिकारी था। उनकी रचनाएँ सीधे समाज के वर्चस्ववादी वर्गों को चुनौती देती थीं, जिससे तत्कालीन समाज में हलचल मची। उनके अनुयायियों ने कबीर पंथ की स्थापना की, जो एक सामाजिक-धार्मिक आंदोलन बन गया। सूरदास का प्रभाव दीर्घकालिक और सांस्कृतिक रहा। उनकी रचनाओं ने वैष्णव संप्रदाय को एक नई दिशा दी और भावी पीढ़ियों के लिए सांस्कृतिक आधार प्रदान किया। उनके पद आज भी गाये जाते हैं और सामाजिक समरसता का संदेश देते हैं।

समानताओं की दृष्टि से दोनों कवियों में कई महत्वपूर्ण समानताएँ मिलती हैं। दोनों ने जन-भाषा का प्रयोग किया, दोनों ने रूढ़िवाद और कर्मकांड का विरोध किया, और दोनों ने सामाजिक चेतना जगाने का कार्य किया। दोनों ने साहित्य को एक विशेष वर्ग की संपत्ति बनने से रोककर जन-साधारण की संपत्ति बनाया। दोनों ने स्त्री-पात्रों को सम्मानजनक स्थान दिया कबीर ने स्त्री-विमर्श के माध्यम से, तो सूरदास ने गोपियों के माध्यम से।

अंततः, यह कहना उचित होगा कि कबीर और सूरदास दोनों ने अपनी-अपनी विधा और दृष्टिकोण से भक्ति आंदोलन को एक सामाजिक आंदोलन का रूप दिया। कबीर ने समाज की बीमारियों का निदान सीधे चीर-फाड़ से किया, तो सूरदास ने प्रेम-रस के माध्यम से समाज को रोगमुक्त बनाने का प्रयास किया। दोनों के प्रयास पूरक थे एक ने तात्कालिक जागृति दी, तो दूसरे ने दीर्घकालिक सांस्कृतिक परिवर्तन का आधार तैयार किया। भक्ति आंदोलन की सफलता इन दोनों धाराओं के सामूहिक प्रयास का ही परिणाम है।

6. निष्कर्ष :

भक्ति आंदोलन भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण अध्याय है जिसने न केवल धार्मिक क्षेत्र में परिवर्तन लाया, बल्कि सामाजिक जीवन में भी गहरी छाप छोड़ी। इस आंदोलन की दो प्रमुख धाराएँ **निर्गुण भक्ति** का प्रतिनिधित्व करते हुए **कबीरदास** और **सगुण भक्ति** का प्रतिनिधित्व करते हुए **सूरदास** दोनों ने अपनी-अपनी शैली में सामाजिक परिवर्तन का संदेश दिया। इस शोध-पत्र के माध्यम से किए गए तुलनात्मक अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष निकलते हैं:

1. निर्गुण और सगुण दोनों धाराओं ने मिलकर भक्ति आंदोलन को केवल धार्मिक आंदोलन न रहकर एक व्यापक **सामाजिक आंदोलन** का रूप दिया। कबीर ने सीधे सामाजिक बुराइयों पर प्रहार करके और सूरदास ने भावनात्मक एकात्मकता के माध्यम से समाज में परिवर्तन की नींव रखी। दोनों ने मध्यकालीन भारतीय समाज की जड़ता, रूढ़िवाद, और कर्मकांडी प्रथाओं को चुनौती दी।
2. कबीरदास ने सामाजिक परिवर्तन के लिए **सीधी और क्रांतिकारी** विधि अपनाई। उन्होंने जाति व्यवस्था, ब्राह्मणवाद, कर्मकांड, और धार्मिक संकीर्णता की खुली आलोचना की। उनकी रचनाएँ साखी, दोहे, और रमैनी एक प्रकार की सामाजिक क्रांति का आह्वान करती हैं। उन्होंने *"जाति न पूछो साधु की"* कहकर मनुष्य की गरिमा को जन्म से ऊपर उठाया। उनकी निर्गुण धारा में ईश्वर के प्रति प्रेम का मार्ग सीधा और निर्मल था कोई मध्यस्थ, कोई आडंबर नहीं। इस प्रकार उन्होंने सामान्य जन को आत्म-सम्मान और आत्म-विश्वास दिया।
3. सूरदास ने सामाजिक परिवर्तन के लिए **परोक्ष और भावनात्मक** मार्ग चुना। उन्होंने साकार ईश्वर (कृष्ण) के माध्यम से प्रेम-भक्ति की परंपरा को समृद्ध किया। उनकी रासलीला में ग्वाले, गोपियाँ, और साधारण ग्रामीण सभी समान रूप से ईश्वर के प्रेम में लीन होते हैं। इस प्रकार उन्होंने एक आदर्श समाज की कल्पना की जहाँ भक्ति ही एकमात्र मापदंड है। उनकी रचनाओं ने सामाजिक भेदभाव को भावनात्मक एकता में विलीन कर दिया।
4. दोनों कवियों ने **जन-भाषा** के माध्यम से जन-साधारण तक पहुँच बनाई। कबीर ने सधुक्कड़ी और खड़ी बोली में अपने विचार व्यक्त किए, जबकि सूरदास ने ब्रज भाषा की कोमल और मधुर अभिव्यक्ति का प्रयोग किया। दोनों ने ही साहित्य को अलंकारिक और दुर्बोध बनाने के बजाय जन-जन की भाषा में प्रस्तुत किया, जिससे उनका संदेश व्यापक रूप से फैल सका।
5. दोनों धाराओं की **समकालीन प्रासंगिकता** आज भी बनी हुई है। आधुनिक भारतीय समाज में जहाँ जाति-भेद, धार्मिक संकीर्णता, और सामाजिक असमानता अभी भी मौजूद है, वहाँ कबीर की सीधी आलोचना और सूरदास की भावनात्मक एकता दोनों ही प्रासंगिक हैं। कबीर हमें सामाजिक बुराइयों पर सीधे प्रहार करने की प्रेरणा देते हैं, जबकि सूरदास हमें प्रेम और सहिष्णुता के मार्ग पर चलने की सीख देते हैं।
6. इस तुलनात्मक अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि सामाजिक परिवर्तन के लिए एक ही मार्ग नहीं होता। कबीर की क्रांतिकारी शैली और सूरदास की भावनात्मक शैली दोनों अपने-अपने संदर्भ में प्रभावशाली रही हैं। कबीर ने तात्कालिक सामाजिक जागृति का कार्य किया, जबकि सूरदास ने दीर्घकालिक सांस्कृतिक परिवर्तन की नींव रखी।
7. अंत में यह कहा जा सकता है कि भक्ति आंदोलन ने भारतीय समाज में एक नई चेतना का संचार किया। कबीर और सूरदास दोनों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से मनुष्य को मनुष्य के रूप में देखने की परंपरा स्थापित की। उनका

संदेश आज भी प्रासंगिक है कि **भक्ति का अर्थ केवल ईश्वर की उपासना नहीं, बल्कि मनुष्य की सेवा और समाज का कल्याण भी है।**

निर्गुण और सगुण दोनों धाराओं ने मिलकर भक्ति को एक जीवन-दर्शन बनाया जो केवल आध्यात्मिक न होकर सामाजिक भी था। कबीर और सूरदास की रचनाएँ आज भी हमें सामाजिक समरसता, धर्म-निरपेक्षता, और मानवीय मूल्यों की रक्षा के लिए प्रेरित करती हैं। उनका योगदान भारतीय साहित्य और संस्कृति में अमर है और भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक प्रेरणा स्रोत बना रहेगा।

7 सुझाव :

भक्ति आंदोलन में कबीरदास एवं सूरदास की रचनाओं के सामाजिक प्रभाव के इस तुलनात्मक अध्ययन से निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं:

शैक्षिक क्षेत्र में: आधुनिक शिक्षा पद्धति में भक्ति साहित्य को केवल साहित्यिक विधा के रूप में नहीं, अपितु सामाजिक चेतना के प्रमुख स्रोत के रूप में शामिल किया जाना चाहिए। कबीर की साखियों और सूरदास की पदावली को स्कूली-कॉलेजी पाठ्यक्रम में इस प्रकार सम्मिलित किया जाए कि छात्र जाति-विरोध, साम्प्रदायिक सद्भाव और सामाजिक समरसता के मूल्यों को आत्मसात कर सकें।

शोध क्षेत्र में: भविष्य के शोधकर्ताओं को कबीर और सूरदास की रचनाओं का सामाजिक-मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से अध्ययन करना चाहिए। विशेष रूप से इन रचनाओं में निहित सामूहिक चेतना, सामाजिक प्रेरणा और जन-मानस पर प्रभाव का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण आवश्यक है। इससे भक्ति साहित्य की सामाजिक प्रासंगिकता और स्पष्ट रूप से स्थापित हो सकेगी।

भाषा-अनुवाद क्षेत्र में: कबीर की सधुक्कड़ी/खड़ी बोली और सूरदास की ब्रज भाषा में रचित रचनाओं का अन्य भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में गुणवत्तापूर्ण अनुवाद किया जाना चाहिए। इससे भक्ति साहित्य की समृद्ध विरासत विश्व स्तर पर प्रसारित हो सकेगी और विभिन्न भाषाई-सांस्कृतिक समुदायों के बीच सामाजिक समरसता के मूल्यों का संवाद संभव होगा।

8 संदर्भ सूची (References/Bibliography)

1. द्विवेदी, हजारी प्रसाद. (1950). कबीर. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
2. शुक्ल, रामचंद्र. (1929). हिंदी साहित्य का इतिहास. काशी: नागरी प्रचारिणी सभा.
3. वर्मा, सुनीत. (2014). Love, Healing, and Human Unity: Lessons From Sant Kabir Das. University of Delhi.
4. शाह, डॉ. परेश के. (2017). Sant Kabir: A Promoter Of Universal Religion Or Religion Of Man. Pune Research.
5. ज्योति, दिव्या. (2021). The Problem of Caste: Bhakti and Equality in Kabir. JNU, New Delhi.
6. तेजावत, डॉ. अरविंद सिंह. (2013). Role of Surdas in the Bhakti Movement. IJRSSH.
7. दास, डॉ. राजनंदिनी. (2016). Sankaradeva and Kabirdas: A Short Comparative Analysis of Their Bhakti.
8. Egyankosh. Unit 13: Kabir: Religious Boundaries and the... IGNOU.
9. कबीरदास. कबीर ग्रंथावली. संपा. श्यामसुंदर दास. इलाहाबाद: जय भारती प्रकाशन, 2015.
10. कबीरदास. बीजक. संपा. श्यामसुंदर दास. इलाहाबाद: नागरी प्रचारिणी सभा, 1928.
11. कबीरदास. साखी संग्रह. संपा. रामकुमार वर्मा. नई दिल्ली: साहित्य अकादमी, 1970.

12. सूरदास. सूरसागर. संपा. मथुराप्रसाद नागर. इलाहाबाद: हिंदी साहित्य सम्मेलन, 1958.
13. सूरदास. सूरसारावली. संपा. कृष्णदत्त पालीवाल. वाराणसी: चौखंबा विद्याभवन, 1968.
14. सूरदास. साहित्य लहरी. संपा. रामचंद्र शुक्ल. काशी: नागरी प्रचारिणी सभा, 1925.
15. Kabir. The Bijak of Kabir. Trans. Ahmad Shah. Hamirpur, U.P., 1917.
16. Kabir. One Hundred Poems of Kabir. Trans. Rabindranath Tagore & Evelyn Underhill. London: Macmillan, 1915.
17. Kabir. Songs of Kabir. Trans. Rabindranath Tagore. New York: Macmillan, 1915.
18. कबीरदास. कबीर ग्रंथावली. संपादक: श्यामसुंदर दास. इलाहाबाद: जय भारती
19. प्रकाशन, 2015.कबीरदास. बीजक. संपादक: श्यामसुंदर दास. इलाहाबाद: नागरी प्रचारिणी सभा,
20. 1928.कबीरदास. साखी संग्रह. संपादक: रामकुमार वर्मा. नई दिल्ली: साहित्य अकादमी,
21. 1970.सूरदास. सूरसागर. संपादक: नागर, मथुराप्रसाद. इलाहाबाद: हिंदी साहित्य
22. सम्मेलन, 1958.सूरदास. सूरसारावली. संपादक: कृष्णदत्त पालीवाल. वाराणसी: चौखंबा
23. विद्याभवन, 1968.सूरदास. साहित्य लहरी. संपादक: रामचंद्र शुक्ल. काशी: नागरी प्रचारिणी
24. सभा, 1925. Kabir. The Bijak of Kabir. Translated by Ahmad Shah. Hamirpur, U.P., 1917.
25. Kabir. One Hundred Poems of Kabir. Translated by Rabindranath Tagore and
26. Evelyn Underhill. London: Macmillan, 1915.
27. Kabir. Songs of Kabir. Translated by Rabindranath Tagore. New York:
28. Macmillan, 1915. Surdas. Sur's Ocean: Poems from the Early Tradition. Translated by Kenneth
29. E. Bryant and John Stratton Hawley. Cambridge: Harvard University Press, 2015
30. द्विवेदी, हजारी प्रसाद. कबीर. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1950.
31. द्विवेदी, हजारी प्रसाद. नाथ संप्रदाय. वाराणसी: नागरी प्रचारिणी सभा, 1966.
32. शुक्ल, रामचंद्र. हिंदी साहित्य का इतिहास. काशी: नागरी प्रचारिणी सभा, 1929.
33. शुक्ल, रामचंद्र. भक्तिकाल. काशी: नागरी प्रचारिणी सभा, 1940.
34. तिवारी, रामनरेश. कबीर और उनका काव्य. इलाहाबाद: साहित्य भवन, 1961.
35. नागर, मथुराप्रसाद. सूरदास. नई दिल्ली: साहित्य अकादमी, 1963.
36. मिश्र, पद्मसिंह. सूरदास: जीवन और रचनाएँ. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन, 1975.
37. वर्मा, कृष्णदत्त. कबीर: समाज सुधारक व्यक्तित्व. जयपुर: आर्य साहित्य मंडल, 1982.
38. पांडे, सुष्मिता. मध्यकालीन भक्ति आंदोलन: इतिहास और दर्शन. जयपुर: कुसुमांजलि प्रकाशन, 1989.
39. शर्मा, कृष्ण. भक्ति और भक्ति आंदोलन: एक नया परिप्रेक्ष्य. नई दिल्ली: मुंशीराम मनोहरलाल, 1987.
40. धर्मवीर, डॉ. कबीर के अलोचक. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2015.
41. कुमारशिव. भक्तिकाव्य और लोकजीवन. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2013.
42. शंभुनाथ. भक्ति आंदोलन और उत्तर-धार्मिक संकट. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2023.
43. मिश्र, श्रीकांत. भक्ति आंदोलन का सामाजिक उपयोगिता. नई दिल्ली: ज्ञान प्रकाशन, 2023.
44. पांडे, रेखा. दिव्य ध्वनियाँ हृदय से: भक्ति आंदोलन और उसके संत. कैंब्रिज: कैंब्रिज स्कॉलर्स पब्लिशिंग, 2010.
45. Mishra, Shrikant, and Kamlesh Kumar. "Social Utility of Bhakti Movement."
46. Knowledgeable Research: A Multidisciplinary Journal 2, no. 1 (2023): 57-63.
47. https://dx.doi.org/10.57067/pzqqer40. Faris TC, Salman. "Impact of Bhakti and Sufi Mysticism on Social Harmony:

48. Understanding Mystical Experiences and Practices." Maklumat: Journal of Da'wah and Islamic Studies 2, no. 4 (2024): 246-55.
49. https://doi.org/10.61166/maklumat.v2i4.40.Pokhrel, Ruksana Sharma. "Understanding Liberation in the Bhakti Movement."
50. Current Research Journal of Social Sciences and Humanities 8, no. 1 (2025):
51. 76-82. https://doi.org/10.12944/crjssh.8.1.07.
52. Kumar, Sanjeev, and Sachin Kumar. "Cultural Syncretism and Socio-political
53. Transformation: The Legacy of Bhakti Saints in Medieval Deccan and North
54. India." Research Review International Journal of Multidisciplinary 9, no. 10 (2024): 34-45. http://dx.doi.org/10.31305/rrijm.2024.v09.n10.005.
55. Chauhan, Poonam. "Critique of the Indian Bhakti Movement." Academicia: An International Multidisciplinary Research Journal 11, no. 12 (2021): 378-84. http://dx.doi.org/10.5958/2249-7137.2021.02644.6.
56. Dutta, Mohua. "Bhakti Movement: A Socio-Religious Struggle of The Marginalised Society." Indian Journal of Applied Research 4, no. 8 (2014): 685-87. http://dx.doi.org/10.15373/2249555x/august2014/196.
57. Tejawat, Arvind Singh. "Role of Surdas in the Bhakti Movement." International Journal of Research in Social Sciences and Humanities 3, no. 4 (2013): 140-149. ISSN: 2249-4642.
58. Bose, Aparna Lanjewar. "Towards a Comparative Poetics of Buddha, Kabir and Guru Nanak: From a Secular Democratic Perspective." Revista Científica Arbitrada de la Fundación MenteClara 4, no. 2 (2019): 19-44. https://doi.org/10.32351/rca.v4.2.85.
59. Pillai, P. Govinda. "Surdas: The Blind Singer." In The Bhakti Movement. London: Routledge, 2022. https://doi.org/10.4324/9781003332152-19.
60. Pillai, P. Govinda. "Tulsidas and Rama Bhakti." In The Bhakti Movement. London: Routledge, 2022. https://doi.org/10.4324/9781003332152-23.